अध्याय – 9
फलोद्यान प्रबन्धन
(Orchard Management)

फलोद्यान के स्थान का चुनाव, योजना, रेखांकन, गड्डे तैयार करना, पौधे लगाना एवं सामान्य देखभाल (Selection of site, Planning, Layout and Planting of Fruit Plants)

9.1 स्थान का चुनाव – (Selection of site)

फलोद्यान लगाना एक स्थायी एवं दीर्घकालीन नियोजन है इसलिए इसके लिए स्थान का चुनाव अति महत्वपूर्ण है। स्थान ऐसा होना चाहिए जहाँ फलवृक्ष उचित वृद्धि कर अधिक फल उत्पादन कर उत्पादन कर्ता को अधिक लाभ मिल सके। सम्भव हो तो ऐसे क्षेत्र का चुनाव करे जहाँ पहले से ही फलवृक्षों के बगीचे लगे हों, इससे अनेक सुविधाएँ आसानी से उपलब्ध हो जाती हैं।

स्थान का चुनाव करते समय निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान देना आवश्यक है –

1. जलवायु – (Climate)

फल उत्पादन में जलवायु एक अति महत्वपूर्ण कारक है। किसी स्थान विशेष की वार्षिक वर्षा, तापमान, हवा, प्रकाश आदि के औसत को जलवायु से जाना जाता है। प्रत्येक फलवृक्ष के लिए एक निश्चित जलवायु की आवश्यकता होती है। स्थान विशेष की जलवायु के अनुसार ही फलवृक्षों का रोपण किया जाता है। जैसे–शुष्क एवं गर्म जलवायु में खजूर, बेर, अनार, आदि लगाये जाते है। गर्म एवं तर जलवायु में केला, नारियल अनन्नास आदि ठण्डी जलवायु में सेव, नाशपती आदि को लगाया जा सकता हैं। फल उत्पादन की दृष्टि से राजस्थान में शुष्क, अर्धशुष्क तथा अर्धनम जलवायु के फलों को ही उगाया जा सकता है।

2. भूमि – (Soil)

प्रायः अलग–अलग फलवृक्षों के लिए विशेष प्रकार की भूमि उपयुक्त होती है। अतः स्थान का चयन करते समय भूमि का विशेष ध्यान रखा जाता है। फलोद्यान के लिए दोमट या बलुई दोमट मिट्टी सबसे अच्छी मानी जाती है। भूमि की सतह 2 मीटर तक गहरी हो अर्थात कोई कठोर सतह नहीं हो, जिससे फलवृक्षों की बढ़वार अच्छी हो सके। भूमि अधिक अम्लीय एवं अधिक क्षारीय या लवणोयुक्त नहीं होनी चाहिए। फलोद्यान के लिए विकार रहित, जीवांशयुक्त गहरी भूमि का चयन करना चाहिए।

3. धरातल एवं स्थिति – (Topography)

फलोद्यान के लिए समतल भूमि का चुनाव करना चाहिए। अधिक ऊँची–नीची भूमि में वर्षा में कटाव की सम्भावना रहती है। साथ ही कृषि क्रियाएँ करने में कठिनाई आती है। भूमि की स्थिति जंगल, उद्योग व ईंट भट्टों के पास भी नहीं होनी चाहिए इससे फलवृक्षों की वृद्धि एवं उपज की गुणवत्ता पर हानिकारक प्रभाव होता है। आम में ब्लेकटिप नामक रोग उद्योग व भट्टे के धुएँ से प्रदूषण के कारण ही होता है।

4. सिंचाई एवं जल निकास – (Irrigation and drainage)

फलवृक्षों को अधिक पानी की आवश्यकता होती है अतः फलवृक्षों की अच्छी वृद्धि एवं फलत के लिए कम लागत पर पर्याप्त पानी उपलब्ध होना चाहिए। कम वर्षा वाले क्षेत्रों में अच्छी गुणवत्तायुक्त, वर्षभर पर्याप्त पानी सिंचाई के लिए उपलब्ध रहना चाहिए क्योकि आम, अमरूद, पपीता, अंगूर, केला, नींबू, संतरा, आदि फलवृक्षों को वर्षभर नियमित सिंचाई की आवश्यकता रहती हैं। सिंचाई के साथ–साथ वर्षा ऋतु में अधिक पानी के निकास की भी उचित व्यवस्था होनी चाहिए, क्योंकि फलोद्यान में लगातार लम्बे समय तक पानी भरे रहने से भूमि की भौतिक दशा खराब हो जाती है जिससे फलवृक्षों की वृद्धि एवं उपज प्रभावित होती है।

5. अन्य सुविधाएँ – (Other facilities)

फलोद्यान के लिए स्थान के चुनाव में निम्न सुविधाओं का भी ध्यान रखा जाना चाहिए। जिससे उद्यान से वांछित लाभ प्राप्त किया जा सके।

1. यातायात, परिवहन व सड़क की सुविधा अच्छी व आवश्यकता अनुरूप होनी चाहिए।
2. फलोद्यान की उपज की बिक्री हेतु बाजार की उपलब्धता सुनिश्चित हो।
3. उद्यान में विभिन्न कार्यों के लिए कुशल व अकुशल श्रमिकों की उपलब्धता हो।
4. समय–समय पर तकनीकी जानकारी की सुविधा हो।
5. उद्यान की सभी प्रकार से सुरक्षा व्यवस्था होनी चाहिए।

उद्यान योजना – (Orchard planning)

फलवृक्षों का रोपण एक दीर्घकालीन कार्य है अतः फलवृक्ष लगाने से पूर्व उसकी अच्छी प्रकार से योजना तैयार करनी चाहिए। उद्यान की सफलता एक अच्छी योजना के क्रियान्विति पर निर्भर करती है। उद्यान की योजना में निम्न बिन्दुओं का ध्यान अति आवश्यक है।

1. बाड़ लगाना – (Fencing)

स्थान के चुनाव के बाद एवं फलवृक्ष लगाने से पहले

उद्यान की सुरक्षा के लिए बाड़ लगाना अति आवश्यक है। इसके लिए कंटीली झाड़ियाँ, मिट्टी की डोल, कंटीले तार, पक्की दीवार आदि में से वित्तीय सुविधानुसार चुनाव करना चाहिए। प्रारम्भ में कुछ वर्षों तक कांटेदार पौधे जैसे – जंगलजलेबी, विलायती बबूल, करौंदा, मेहन्दी, थोर, नागफनी आदि की बाड़ कर उद्यान की सुरक्षा की जा सकती है।

2. भूमि की प्रारम्भिक तैयारी – (Primary operation)

चयनित स्थान को समतल करना, पत्थर आदि निकालना तथा जंगली पैड़–पौधों एवं खरपतवारों को निकालना प्रारम्भिक कार्य होते हैं। इससे स्थान फल वृक्ष लगाने के लिए उपयुक्त अवस्था में आ जाता है। यदि स्थान पर पूर्व से ही खेती हो रही है तो प्रारम्भिक तैयारी की आवश्यकता नही रहती है बल्कि सामान्य जुताई आदि कर तैयार कर लेते हैं। अच्छा रहे भूमि समतल कर 1–2 हरी खाद वाली फसलें बुआई करने से मिट्टी की भौतिक दशा में सुधार आता है।

3. वायुरोधी वृक्ष – (Wind break)

फलवृक्षों का ठण्डी, गर्म एवं तेज हवाओं से बचाव के लिए बाग के उत्तर–पश्चिम दिशा में वायुरोधी वृक्षों का रोपण करना चाहिए। वायुरोधी वृक्ष ठण्डी, गर्म एवं तेज हवाओं से फलवृक्षों का बचाव कर उत्पादन में वृद्धि करते है। वायुरोधी वृक्ष ऊँचे, सघन, शीघ्र बढ़ने वाले जैसे– देशी जामुन, आम, नीम, शहतूत, कमरख, शीशम, आदि को लगाया जा सकता है। परन्तु इस बात का ध्यान रखे कि वायुरोधी वृक्ष, मूल वृक्षों को किसी प्रकार का नुकसान नहीं पहुँचाएँ।

4. सड़क एवं रास्ते – (Road and path)

फलोद्यान की उपज का निस्तारण एवं आवश्यक सामग्री जैसे– खाद, उर्वरक, दवा, मशीन, उपकरण आदि को उद्यान के प्रत्येक भाग तक सुगमता पूर्वक पहुँचाने के लिए सड़क एवं रास्तों का प्रावधान रखना चाहिए। प्रायः उद्यान में एक मुख्य सड़क तथा प्रत्येक खण्ड या हिस्से को जोड़ने के लिए सहायक रास्ते बनाने चाहिए। सड़क व रास्ते पक्के, कच्चे, या पत्थर आदि के हो सकते हैं, परन्तु सही अवस्था में तथा आवागमन सुचारू हो सके का ध्यान रखना चाहिए। उद्यान में जमीन का अधिक उपयोग हो सके इसके लिए फलवृक्षों के बीच में उपलब्ध अन्तर का भी इस कार्य के लिए उपयोग किया जा सकता है।

5. सिंचाई की नालियाँ – (Irrigation channels)

उद्यान में प्रत्येक फलवृक्ष तक सिंचाई का पानी सुगमता से पहुँचे, इसके लिए सिंचाई की नालियाँ बनानी चाहिए। यह नालियाँ कच्ची, पक्की या सीमेन्ट के पाइपों से भी बनायी जा सकती हैं। आजकल उद्यान में सिंचाई के लिये अत्याधुनिक विधियाँ ड्रिप सिंचाई, फव्वारा सिंचाई आदि का अत्यधिक प्रचलन है। यह कम पानी में अधिक उपयोगी तथा कम कीमत पर अधिक लाभदायक रहती है।

6. आवास एवं कार्यालय – (Residance and office)

फलोद्यान की योजना में अच्छे प्रबन्धन एवं पर्याप्त देखभाल के लिए आवास एवं निरीक्षण, भण्डारण, पैकिंग, विपणन आदि के लिए कार्यालय, भवन का निर्माण भी करना चाहिए। हालांकि इनका निर्माण प्रारम्भिक लागत कम करने के लिए बाद के वर्षों में भी किया जा सकता है, परन्तु योजना में स्थान अवश्य देना चाहिए।

रेखांकन – (Layout)

फलोद्यान का अच्छा रेखांकन वह होता है, जिसमें उद्यान की भूमि का सदुपयोग हो तथा प्रत्येक फलवृक्ष को वृद्धि करने, प्रकाश के लिए पर्याप्त स्थान व उद्यानिक क्रियाएँ सुगमता से की जा सकें। फलोद्यान के रेखांकन के लिए सर्वप्रथम एक आधार रेखा खींची जाती है। यह आधार रेखा बाड़ एवं वायुरोधी वृक्षों की कतार से लगभग 5–6 मीटर की दूरी पर बनानी चाहिए।

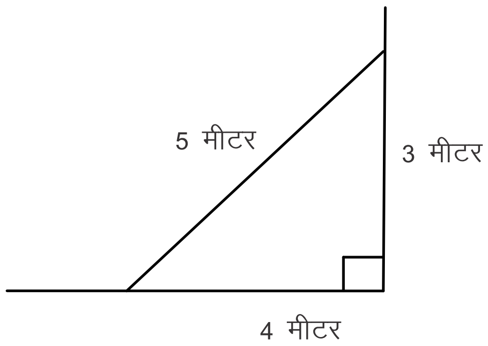

इस आधार रेखा के एक सिरे पर समकोण बनाती हुयी एक लम्बवत रेखा खींच लेते हैं। इसके पश्चात बाग का रेखांकन विभिन्न विधियों से किया जाता है। फलवृक्षों की प्रथम पंक्ति, पौधे के आपसी अन्तर की आधी दूरी पर चिन्हित की जाती है। जैसे– पौधों की दूरी 8 मीटर हो तो प्रथम पंक्ति 4 मीटर पर होगी, शेष पंक्तियाँ 8 मीटर पर रहेगी।

फलोद्यान में फलवृक्ष लगाने की प्रमुख विधियाँ निम्न है :–

1. वर्गाकार विधि
2. आयताकार विधि
3. त्रिभुजाकार विधि
4. पूरक या पंच भुजाकार विधि
5. षट् भुजाकार विधि
6. कण्टूर विधि / समोच्च रेखा विधि

1. वर्गाकार विधि – (Square system)

यह सबसे सरल, उत्तम एवं अधिक प्रयोग में ली जाने वाली विधि है। इस विधि में पंक्ति से पंक्ति एवं पौधे से पौधे का अन्तर समान रखा जाता है। इस विधि में कतार से कतार एवं पौधे से पौधे के समान दूरी पर निशान लगाकर रेखाएँ खींची

जाती है। जिस स्थान पर रेखाएँ आपस में काटती हैं। वहाँ फलवृक्ष लगाया जाता है। इस प्रकार चार फलवृक्ष मिलकर वर्ग का निर्माण करते हैं। इस विधि में बाग सघन नहीं होता तथा कृषि क्रियाएँ आसानी से की जाती हैं।

2. आयताकार विधि – (Rectangular system)

यह वर्गाकार विधि के समान ही होती है अन्तर केवल यह है कि इस विधि में पौधे से पौधे की दूरी पंक्ति से पंक्ति की दूरी से कम होती है। दो पंक्तियों के चार पौधे मिलकर आयत बनाते है। इस विधि में फलवृक्षों को पर्याप्त स्थान मिलता है तथा उद्यानिकी क्रियाएँ करने में आसानी रहती है।

3. त्रिभुजाकार विधि – (Triangular system)

इस विधि में पौधों का अन्तर वर्गाकार विधि की तरह होता है लेकिन दूसरी कतार के पौधे, पहली पंक्ति के दो पौधों के मध्य लगाये जाते हैं। इस विधि में तीन फलवृक्ष मिलकर त्रिभुज का निर्माण करते हैं। पौधे लगाने का यह क्रम आगे की पंक्तियों तक बढ़ाया जाता है। इस विधि में पौधों का अन्तर 10 मीटर है तो पहली पंक्ति का पहला पौधा 5 मीटर की दूरी पर लेकिन दूसरी पंक्ति का पौधा 10 मीटर की दूरी पर होगा। इस विधि में भूमि का सदुपयोग होता है परन्तु कृषि क्रियाओं में कठिनाई होती है।

4. पंच भुजाकार विधि– (Filler system/ Quincunx)

इसको पूरक विधि के नाम से भी जाना जाता है। यह वर्गाकार विधि की तरह ही है। परन्तु वर्गाकार विधि के चार फलवृक्षों के मध्य एक फलवृक्ष और लगाया जाता है। इस तरह पाँच फलवृक्षों से पंचभुज का निर्माण होता है। इस विधि में वर्गाकार से लगभग दो गुने फलवृक्षों का रोपण होने से बाग सघन हो जाता है। अतः चारो कोनो पर स्थायी फलवृक्ष तथा बीच में अस्थायी या पूरक फलवृक्ष को लगाते है जो कि कुछ वर्षों बाद हटा दिया जाता है। पूरक पौधे के रूप में पपीता, फालसा, अनन्नास, केला आदि का रोपण करते हैं। इससे फलोद्यान से प्रारम्भ में अतिरिक्त आय प्राप्त होती है।

6. समोच्च रेखा विधि – (Contour system)

इस विधि का प्रयोग ऊँची–नीची, पहाड़ी, असमतल भूमियों में किया जाता है। इसमें ढलान के मध्य पंक्ति बनाकर कन्टूर के साथ–साथ पौधे लगा दिये जाते हैं। इसी सीध में दूसरी ढलान अर्थात कन्टूर पर पौधे लगा देते हैं।

सघन रोपण – (High density planting)

फलोद्यान में एक निश्चित क्षेत्रफल से अधिक उत्पादन लेने के लिए फलवृक्षों का आपसी अन्तर कम कर रोपण करना सघन रोपण कहलाता है। इससे प्रति ईकाई क्षेत्रफल में फलवृक्षों की संख्या अधिक होने से उपज बढ़ जाती है। इस विधि में उनके आनुवंशिकी में परिवर्तन किये बिना वृक्षों का आकार कम रखा जाता है। फलवृक्षों को छोटा बनाने के लिए बौने मूलवृन्त, बौनी जातियाँ (जैसे –आम में आम्रपाली), काट–छाँट, रसायनों का प्रयोग, उचित पोषण आदि उद्यानिक क्रियाओं को अपनाया जाता है। प्रायः बाग लगाने की वर्गाकार, आयताकार, त्रिभुजाकार विधियों में ही फलवृक्षों का अन्तर कम कर उनकी संख्या बढ़ाते है। इससे उत्पादन अधिक मिलने लगता है। यह प्रयोग शहरी क्षेत्रों में अधिक मंहगी भूमियों में किया जाता है। इस पद्धति में उद्यान प्रबन्धन पर अधिक ध्यान रखा जाता है। आम, सेव, नाशपती, आडू में यह प्रयोग किया जा रहा है। जब फलवृक्षों का अन्तर बहुत कम किया जाता है तो उसे उच्च सघन रोपण कहते हैं।

गड्डे तैयार करना – (Digging of pits)

फलों के पौधे लगाने से पहले निश्चित दूरी पर निशान लगाकर गड्डे खोदना चाहिए। गड्डे फलवृक्ष रोपण के एक माह पूर्व खोद कर खुला छोड़ना चाहिए। वर्षा ऋतु में रोपण के लिए जून माह में तथा बसन्त अर्थात फरवरी में रोपण के लिए जनवरी में गड्डे खोदना चाहिए। गड्डों का आकार फलवृक्षों के आकार पर निर्भर करता है।

पौधे लगाने से एक माह पूर्व गड्डे खोदकर लगभग 15–20 दिन धूप में खुला छोड़ना चाहिए, जिससे कि तेजधूप में

1.	छोटे आकार के फलवृक्ष जैसे–पपीता, फालसा, केला आदि।	50 x 50 x 50 सेमी आकार में
2.	मध्यम आकार के फलवृक्ष जैसे–अनार, अमरूद, नींबू आदि।	75 x 75 x 75 सेमी आकार में
3.	बडे आकार के फलवृक्ष जैसे – कटहल, आम आदि।	1 x 1 x 1 मी आकार में

5. षट्भुजाकार विधि – (Hexagonal system)

इस विधि को समत्रिबाहु त्रिभुज विधि भी कहते है। इसमें छः फलवृक्षों से मिलकर षट्भुजाकार आकृति का निर्माण होता है। तथा इनके बीच एक अतिरिक्त पौधा सातवें पौधे के रूप में रहता है। इससे बाग बहुत सघन हो जाता है। तथा वर्गाकार विधि की तुलना में लगभग 15 प्रतिशत पौधे अधिक लगते हैं। प्रायः शहर के नजदीक मँहगी भूमि में इस विधि से फलवृक्षों का रोपण किया जाता है। बाग सघन होने से कृषि क्रियाओं में असुविधा रहती है।

हानिकारक जीवाणु आदि नष्ट हो जाएं। गड्डा खोदते समय ऊपर की आधी मिट्टी उपजाऊ होती है इसमें गोबर की खाद/कम्पोस्ट का 1:1 अनुपात में मिलाकर गड्डा भरना चाहिए। गोबर की कच्ची खाद का प्रयोग नहीं करना चाहिए अन्यथा दीमक का प्रकोप रहता है। फलवृक्षों की उचित वृद्धि हेतु गड्डे के आकार के अनुसार खाद या कम्पोस्ट प्रति गड्डे की दर से मिलाना चाहिए। गड्डा भरते समय दीमक से बचाव के लिए 60–100 ग्राम मिथाइल पैराथियान डस्ट या क्लोरोपायरीफास प्रति गड्डा मिलाना चाहिए। गड्डे को खेत की सतह से ऊँचाई

तक भर कर सिंचाई करते है जिससे कि गड्डे में मिट्टी अच्छी प्रकार भर जाएं।

पौधे लगाना – (Planting)

फलोद्यान में फलवृक्षों को उनकी प्रकृति, भूमि, जलवायु आदि के अनुसार उचित दूरी पर लगाना चाहिए। फलवृक्षों का आपसी अन्तर अधिक रखने पर पौधों की संख्या कम होने से पैदावार कम हो जाती हैं। जबकि सघन रोपण से गुणवत्ता पूर्ण उत्पादन नहीं मिल पाता। अतः फलवृक्षों को पर्याप्त अन्तर पर रोपण करना चाहिए जिससे कि बाद में किसी प्रकार की कठिनाई नही हो। फलवृक्षों को लगाने की दूरी निम्नानुसार हैः–

आम, कटहल – 10 × 10 मीटर
आँवला, लीची, चीकू – 9 × 9 मीटर
अमरूद, बेर – 8 × 8 मीटर
नींबू, माल्टा, नाशपती, खजूर – 6 x 6 मीटर
पपीता, केला, अंगूर, फालसा – 3 x 3 मीटर

पौधे लगाने का समय – (Time of planting)

फलदार पौधों की रोपाई फलों के अनुसार वर्ष में दो बार होती है। सदाबहार फलवृक्षों को वर्षा ऋतु अर्थात जुलाई–अगस्त में लगाना उत्तम रहता है। अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में यह कार्य सितम्बर में भी किया जा सकता है। वर्षा के अलावा पौधों को बसन्त ऋतु अर्थात फरवरी–मार्च में भी लगाया जा सकता है लेकिन इस समय ग्रीष्म में छोटे फलवृक्षों को गर्मी से बचाव एवं सिंचाई की पर्याप्त व्यवस्था हो। पतझड़ वाले वृक्षों को सुषुप्तावस्था अर्थात जनवरी में भी रोपण किया जा सकता है।

पौधे लगाते समय सावधानियाँ (Precautions at the time of planting)

फलों के पौधों को गड्डों में लगाते समय निम्न सावधानियाँ रखने से बाद में होने वाली कठिनाईयों से बचाव हो जाता हैः–

1. पौधा हमेशा सांयकाल लगाएं। कभी भी तेज धूप या तेज वर्षा मे रोपण नहीं करें।
2. पौधे पर लिपटी घास या पोलिथीन को सावधानी से अलग करें। पौधे के साथ लगी मिट्टी (पिण्ड) को नुकसान नहीं हो।
3. पौधे पर रोपण या कलिकायन का जुड़ाव भूमितल से 25 सेन्टीमीटर ऊपर होनी चाहिए।
4. पौधा अधिक गहराई पर नहीं लगाएं।
5. पौधा लगाने से पूर्व ऊपरी भाग की 4–5 पत्तियाँ छोडकर शेष पत्तियाँ हटा देना चाहिए।
6. पौधे को गड्डे में सीधा मध्य में लगावे तथा पौधा लगाने के बाद चारो तरफ से मिट्टी को अच्छी प्रकार दबा देना चाहिए।
7. पौधा लगाने के तुरन्त बाद सिंचाई अवश्य करें।
8. यदि आवश्यक हो तो लकड़ी, बांस आदि का सहारा लगाएं जिससे तेज हवा से पौधो को नुकसान नहीं हो।

सामान्य देखभाल – (General care)

फलोद्यान में फलवृक्ष को स्थायी रूप से रोपण के बाद वह अच्छी वृद्धि कर सके तथा स्वस्थ्य रहे इसके लिए उनकी देखभाल पर विशेष ध्यान दिया जाता है। इसके लिए निम्न क्रियाएँ समय–समय पर की जाती है।

1. पौधों को आवश्यकतानुसार सिंचाई करना। सिंचाई सामान्यतः गर्मियों में 7–8 दिन के अन्तर पर तथा सर्दियों में 10–15 दिन के अन्तराल पर करते हैं। सिंचाई की मात्रा कम या अधिक नहीं हो कर, आवश्यकतानुसार हो। प्रायः छोटे फलवृक्षों में इसके लिए ड्रिप सिंचाई विधि अच्छी मानी जाती है।
2. फलवृक्षों के आस–पास खरपतवार भी उग आते हैं। इससे फलवृक्षों की वृद्धि प्रभावित होती है। अतः बाग में समय–समय पर निराई गुड़ाई कर खरपतवारों को निकालते रहने से मृदा की भौतिक दशा में सुधार आता है तथा पौधे अधिक तेजी से वृद्धि करते हैं।
3. फलवृक्षों को भूमि की दशा के अनुसार खाद एवं उर्वरक भी देना आवश्यक है। प्रायः वर्ष में एक बार संतुलित मात्रा में इसका प्रयोग करना चाहिए। उर्वरक प्रयोग के बाद हल्की सिंचाई अवश्य करें।
4. शीतकाल में पाले एवं ग्रीष्म में गर्म हवाओं से छोटे पौधों का बचाव अवश्य करें। इसके लिए दक्षिण दिशा में खुला छोड़कर घास/टाटियाँ/सरकण्डे से ढकना तथा छाया करनी जैसी क्रियाएँ की जानी चाहिए।
5. फलवृक्षों का बड़े होने पर फलतः के लिए अच्छा ढांचा तैयार हो, इसके लिए प्रारम्भ से ही उसकी आवश्यकतानुसार कांट–छांट तथा सधाई की क्रियाएँ की जाएं। यह कार्य प्रशिक्षित व्यक्ति ही करें। इसका ध्यान रखें।
6. कीट एवं बीमारियों से बचाव के लिए दवा आदि का छिड़काव करें तथा आवश्यक होने पर पादप हार्मोन का भी छिड़काव कर पौधों को स्वस्थ्य रखें।
7. कभी–कभी किन्हीं क्षेत्रों में तेज हवाओं से छोटे पौधों को काफी नुकसान होता है। अतः ऐसी स्थिति में उनको लकड़ी, बांस आदि का सहारा भी दें जिससे पौधे टूटे नहीं।

9. 2 प्रतिकूल मौसम एवं बचाव (Adverse weather condition and their remedies)

फलवृक्ष रोपण से लेकर बाद तक मौसम से प्रभावित होता है। फलवृक्षो की वृद्वि, फलन तथा उसकी गुणवत्ता पर मौसम का बहुत अधिक प्रभाव होता है। वातावरण में तापमान का कम या

अधिक होना, तेज हवाओं का चलना, अतिवर्षा का होना, वर्षा का असमय होना आदि सभी मौसम में परिवर्तन के लक्षण हैं। मौसम के इस प्रकार अचानक परिवर्तन से फलवृक्ष बहुत अधिक प्रभावित होते हैं। इससे फलवृक्षों को काफी हानि होती है तथा उपज भी कम मिलती है।

मौसम की ऐसी परिस्थितियाँ जो फलवृक्षों की वृद्धि, विकास और उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है, प्रतिकूल मौसमी दशाऐं कहलाती है। मौसम की प्रतिकूल दशाओं में पाला, गर्म हवा या लू, ठण्डी हवाएँ, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, आँधी–तूफान आदि शामिल हैं।

पाला या तुषार (Frost)

सर्दी के दिनों में दिसम्बर–जनवरी के माह में जब वायुमण्डल का तापमान रात्रि को $0^{\circ}C$ या इससे नीचे आ जाता है, उस समय घास–फूंस व पौधों की पत्तियों पर पतली पर्त के रूप में बर्फ जम जाती है बर्फ की यह परत पाला कहलाती है।

पाले का प्रभाव (Effect of Frost)

पाले का प्रभाव सभी प्रकार के पेड़–पौधों पर देखा जाता है विशेष रूप से छोटे फलवृक्ष एवं चौड़ी पत्ती वाले फल वृक्ष इससे अधिक प्रभावित होते हैं। वातावरण में तापमान कम हो जाने से पौधों की वृद्धि एवं फलत प्रभावित हो कर रूक जाती है। कभी कभी कम तापमान की स्थिति अधिक समय तक रहने से फलवृक्षों की पत्तियों में विद्यमान कोशिका जल जमकर बर्फ बन जाता है। इससे आयतन बढ़ने के कारण कोशिका भित्ति फट जाती है और कोशिकाएँ मर जाती हैं, इससे पौधा झुलसा हुआ दिखाई देता है और अन्त में नष्ट हो जाता है। उत्तरी भारत व राजस्थान में दिसम्बर के अन्तिम सप्ताह से जनवरी के अन्त तक पाले का प्रकोप अधिक रहता है। बड़े फलवृक्षों की तुलना में छोटे फलवृक्ष इससे अधिक नष्ट होते हैं।

पाले से बचाव (Precaution from Frost)

पाला तापमान के जमाव बिन्दु के कारण होता है, इस तापमान को नियंत्रित करना कठिन होता है, परन्तु कुछ उपाय ऐसे किये जाते है जिनसे पौधों के आस पास का तापमान बढ़ाया जाकर पाले से बचाव किया जा सकता है। बचाव के कुछ उपाय निम्न है–

1. **सिंचाई करना (Irrigation) :** पाले की आशंका होने पर बाग में सिंचाई करते हैं। सिंचाई सांयकाल करे, जिससे भूमि व फलवृक्षों का तापमान वातावरण से $1–2^{0}$ अधिक हो जाता है और पाले का असर पौधों पर कम होता है।
2. **धुआँ करना (Smudging) :** बाग में सांयकाल घासपूस, फसल अवशेष व अन्य पदार्थों को जला देना चाहिए इससे वातावरण में धुंआ होने से तापमान में वृद्धि हो जाती है। यह ध्यान रहे कि घासफूस से धुंआ अधिक होना चाहिए। यह फलवृक्षों को पाले से बचाव का प्रभावी तरीका है।
3. **गंधक के अम्ल का छिड़काव (Acid spray) :** गंधक के अम्ल का हल्की सान्द्रता (0.1%) वाले घोल का छिड़काव करने से पौधो में कम तापमान को सहन करने की क्षमता में वृद्धिसे पौधो की पाले से सुरक्षा हो जाती है।
4. **टाटियाँ बांधकर (Shelter) :** नये लगाये गये छोटे फलवृक्षों को सर्दी में घास, सरकण्डे, जूट, मूंज आदि की टाटियाँ बनाकर सायंकाल से सूर्य निकलने तक ढक देते है। इससे उनका कुछ हद तक बचाव हो जाता है।
5. **विद्युत हीटर द्वारा (By electric heater) :** प्रायः यह प्रयोग विदेशो में किया जाता है। इसमें छोटे क्षेत्र में रात्रि के समय उद्यान में स्थान–स्थान पर विद्युत चालित हीटर का प्रयोग करते है। इससे बाग के एक निश्चित क्षेत्र में वातावरण गर्म होकर तापमान में वृद्धि हो जाती है। इससे फलवृक्षों का बचाव होता है। यह एक महंगा तरीका है, हमारे देश में बहुत ही सीमित क्षेत्र में प्रयोग होता है।
6. **वायुरोधी वृक्ष लगाना (Wind breaks) :** फलोद्यान को ठण्डी एवं गर्म हवाओं, लू आदि से बचाव के लिए बाग के उत्तर पश्चिमी दिशा में नीम, जामुन, देशी आम, शहतूत आदि वृक्षों का रोपण किया जाता है। इन वृक्षों से फलवृक्षों की उत्तरी ठण्डी हवाओं से बचाव होता है। साथ ही गर्म हवाएँ व लू से भी बचाव होता है।
7. ऐसे क्षेत्र जहाँ पाले की सम्भावना अधिक होती है उन स्थानों पर फलवृक्षों की पाला रोधी किस्मों का रोपण करना चाहिए।

गर्म हवाएँ (Hot winds) :

भारत के मैदानी क्षेत्रो विशेषकर उत्तरी भारत में गर्मी के दिनों में मई–जून के माह में अधिक तापमान के कारण गर्म हवाएं चलती है इन हवाओं को ''लू'' कहते हैं। इन गर्म हवाओं से भूमि के साथ–साथ वातावरण के तापमान में भी बढ़ोत्तरी होती है जिससे छोटे फल वृक्ष, फूल, फल आदि झुलसकर नष्ट हो जाते है।

गर्म हवाओं का प्रभाव (Effect of hot winds) : गर्म हवाओं से तापमान में वृद्धि हाती है, जिससे वृक्षों की वाष्पोत्सर्जन में बढ़ोतरी होती है, इससे पौधों से पानी का तेजी से ह्रास होने लगता है। पौधा पानी की कमी को सहन नही कर पाता और एक स्थिति के बाद झुलस कर नष्ट हो जाता है। सामान्यत गर्म हवाओं से वातावरण का तापमान अधिक हो जाता है, इससे भी पौधों की पत्तियाँ, कोमल टहनियाँ, फूल, फल आदि झुलस कर नष्ट होते हैं। छोटे पौधों पर यह अधिक नुकसान करता है। कभी कभी पूरा पौधा ही सूखकर नष्ट हो जाता है।

बचाव के उपाय (Precautions) :

1 गर्मी के दिनों में उद्यान में सिंचाई की पर्याप्त व्यवस्था हो, जब तापमान में बढ़ोतरी हो उस समय पर्याप्त सिंचाई कर फलवृक्षो को बचावें।

2 फलोद्यान के चारो तरफ वायुरोधी वृक्ष लगाकर गर्म हवाओं से सुरक्षा करें।

3. बड़े व पुराने फलवृक्षो के तनों पर सफेद चूने का लेप करे या इन पर कुछ समय के लिए तापरोधी पदार्थो को लपेट देवे।

4. प्रायः गर्म हवाएँ पश्चिम दिशा से चलती है, अतः छोटे फलवृक्षो के इस दिशा में टाटियाँ या सरकण्डे लगाकर लू से रक्षा करें।

5 पानी की पर्याप्त मात्रा हो तो गर्मी में दोपहर के समय उद्यान में स्प्रिकलर या फव्वारा से उद्यान में पानी छिड़के, जिससे आस–पास के वातावरण का तापमान कम होकर फलवृक्षों का बचाव हो सकें।

अतिवृष्टि –

वर्षा का अत्यधिक मात्रा में लम्बे समय तक होना अतिवृष्टि कहलाता है। इससे फलोद्यान में पानी भरने से समस्या होती है वही फलवृक्षों से फल, फूल झड़ने व परागकण नष्ट होने से फलत भी प्रभावित होती है। अतिवृष्टि से छोटे फलवृक्षों के गलने, रोग लगने व कींटो के प्रकोप से बहुत अधिक नुकसान होता है। उद्यान में पानी भरा रहने पर भूमि की भौतिक दशा भी प्रभावित होकर फलवृक्षो को नुकसान करती है।

अतिवृष्टि वाले क्षेत्रों में स्थित फलोद्यान में जल निकास की उचित व्यवस्था होने से फलवृक्षो को कुछ हद तक बचाया जा सकता है।

अनावृष्टि :–

वर्षा का नही होना या बहुत कम मात्रा में होना अनावृष्टि कहलाता है। ऐसी स्थिति में पानी के अभाव में फलवृक्षों की वृद्धि एवं फलत बहुत अधिक प्रभावित होती है पानी के अभाव में पौधों की कार्यिकीय क्रियाएँ सुचारू रूप से सम्पन्न नही होने के कारण फलवृक्षों से उत्पादन नही मिल पाता तथा कभी कभी पौधे सूखकर नष्ट हो जाते हैं।

उद्यान में अनावृष्टि से उत्पन्न पानी की कमी की पूर्ति के लिए सिंचाई की पर्याप्त व्यवस्था हो जिससे नियमित सिंचाई की जा सके। कम पानी की स्थिति में ड्रिप सिंचाई पद्धति का उपयोग लाभदायक रहता है। फलोद्यान में नमी बनाये रखने के लिए फलवृक्षो के आस पास पलवार (मल्चिंग) का प्रयोग करना चाहिए। फलवृक्षों में रासायनिक उर्वरकों के साथ साथ कार्बनिक खादों का अधिक प्रयोग करना चाहिए। वर्षा के जल का उचित संरक्षण कर, पानी की कमी की पूर्ति की जा सकती है।

आँधी–तूफान –

कभी कभी मौसम में अचानक परिवर्तन के कारण आँधी तूफान आते है जिसमें अत्यधिक तेज गति से हवा वर्षा के साथ आती है। यह स्थिति फलोद्यान के लिए काफी नुकसानदायक रहती है। क्योकि अचानक उत्पन्न ऐसी परिस्थिति से बचाव का कोई संतोषजनक उपाय नही है। तेज आँधी तूफान से फलवृक्षों की शाखाएं टूटना, फलवृक्षों का जड़ से उखड़ना, फूल व फलों का झड़ना तथा परागण प्रक्रिया में अवरोध से सम्पूर्ण फलोद्यान प्रभावित होकर कभी कभी अफलत की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

इससे बचाव के लिए फलोद्यान के चारो तरफ वायुरोधी वृक्ष लगाना तथा पक्की ऊँची दीवार बनाकर हवाओं की गति को कम किया जा सकता है। छोटे फलवृक्षों जैसे केला, पपीता आदि को बांस लकड़ी आदि का सहारा लगाना चाहिए।

9.3 उद्यान मे अफलन की समस्याएँ एवं समाधान (Unfruitfulness and their Remedies)

अफलन से तात्पर्य है कि फलवृक्षो में फूल एवं फल नही बनना अथवा बहुत कम या आंशिक रूप से ही आना। अफलन फलोद्यान की एक प्रमुख समस्या है। कभी–कभी वृक्षो पर एक टहनी पर फूल फल लगते हैं जबकि दूसरी टहनी वंचित रह जाती है। ऐसी परिस्थिति में फलोद्यान अनुत्पादक कहलाता है। अर्थात उद्यान से कम फलत या आंशिक फलत के कारण आमदनी कम एवं लागत अधिक होने को फलोद्यान की अनुत्पादकता कहते हैं।

अफलन के कारण (Factors of unfruitfulness) :

प्रायः फलोद्यान में अफलन निम्न दो प्रकार के कारको के कारण होता हैं–

(1) बाह्य कारक **(External factor)**

(2) आंतरिक कारक **(Internal factor)**

(1) बाह्य कारक (External factor) : फलवृक्षों में फूल उत्पन्न होने से लेकर फल पकने तक विभिन्न प्रकार की उद्यानिक क्रियाएँ, मौसम की दशाँए जैसे अनेक कारक होते हैं। जो अफलन की स्थिति उत्पन्न करते हैं। जैसे–

1. **पोषक तत्वों की स्थिति (Nutrients) :** फलवृक्षों में अच्छे फल उत्पादन के लिए पोषक तत्वों की संतुलित मात्रा का उपलब्ध होना आवश्यक होता है। इन तत्वो में से किसी एक की भी कमी या अधिकता के कारण असन्तुलन हो कर अफलन होता है। जैसे अच्छे फलन के लिए कार्बोहाइड्रेट नाइट्रोजन (C:N) अनुपात में सन्तुलन होना आवश्यक है। फास्फोरस, सल्फर, बोरान तत्वों की कमी से भी फूल नहीं आते हैं। नाइट्रोजन की अधिकता केवल वानस्पतिक वृद्धि को ही बढ़ावा देती है। इस प्रकार फलवृक्षों को संतुलित पोषक तत्वों की उपलब्धता फलन

के लिए आवश्यक है।

2 **मौसम की स्थिति (Weather) :–** कभी–कभी फलवृक्षों पर फूल एवं फल बनते समय मौसम में अचानक परिवर्तन से तेज हवाएँ, आँधी, तूफान, असमय वर्षा पाला लू जैसे प्रतिकूल परिवर्तन होते हैं। विशेषकर फूल आते समय वर्षा, तेज हवाएँ परागण की क्रिया बाधित करती हैं। इससे फलन प्रभावित होकर अफलन की स्थिति उत्पन्न करती है।

3. **रोग एवं कीटो का प्रकोप (Insect and diseases) :** फलोद्यान में कभी कभी कीट एवं रोग के कारण फलन की दशा में अत्यधिक नुकसान होता है जिससे फलवृक्षों से किसी प्रकार उत्पादन नही हो कर अफलन हो जाता है जैसे आम में आम का फुदका कीट, बेर में छाछ्या रोग, पपीता में मोजेक आदि।

4. **सिंचाई (Irrigation) :** फलवृक्षों को पर्याप्त एवं समय पर सिंचाई नही करने से भी काफी नुकसान होता है, विशेष कर फूल फल आते समय, पानी की कमी से फलवृक्षों की आन्तरिक कियाएं प्रभावित होती हैं। जिससे फलन पर विपरीत प्रभाव होता है।

5. **कटाई–छँटाई (Pruning) :** फलवृक्षों में समय पर कटाई छँटाई करने से वृद्विएवं फलत अच्छी प्राप्त होती है। अतः समय पर फलवृक्षों की आवश्यकतानुसार काट–छाँट नही करने पर अफलन की स्थिति उत्पन्न होती है। जैसे बेर, अंगूर आदि।

6. **अनुपयुक्त भूमि (Soil condition) :** फलवृक्षों को प्रतिकूल एवं विकारयुक्त भूमि में रोपण करने से भी फूल–फल प्रभावित होता हैं। भूमि के कठोर, पथरीली, कार्बनिक पदार्थ की कमी की स्थिति में वृद्धि प्रभावित होती है तथा उचित पोषक तत्वों के अभाव में अफलन होता है।

आंतरिक कारक (Internal factor) : ऐसे कारक फलवृक्षों की आंतरिक परिस्थितियों से सम्बन्ध रखते हैं जिससे फलवृक्षो में फूल आने के बाद किन्ही कारणों से प्रभावित होकर वह समय पर फल नही बनकर नष्ट हो जाता है। ऐसे कारक निम्न तीन प्रकार के हैं :–

1. आनुवंशिकी कारक **(Genetical factors)**
2. दैहिक कारक **(Physiological factors)**
3. फलवृक्षों की विकासीय प्रवृत्ति **(Evolutionary tendencies of fruit plants)**

1. **आनुवंशिकी कारक (Genetical factors) -** इसमें फलवृक्षों के निम्न आनुवांशिकीय विकार उत्पन्न होने से पूर्ण फूल बनने में समस्या आती है, जैसे :–

(अ) **असंगतता (Incompatibility) –** इसमें पुष्पों में जननांगो के पूर्ण विकसित होने के बाद भी बीजाण्ड एवं परागकण में असंगति होती है जिससे फूल परागित होने के बाद भी नष्ट हो जाता है। जैसे आड़ू, नाशपाती, सेव आदि में

(ब) **संकरीकरण (Hybridity) –** कुछ फलवृक्षों में संकरीकरण के समय गुणसूत्रों के असमान विभाजन के कारण स्वबंध्यता की स्थिति उत्पन्न होती हैं जिससे फूल से फल का निर्माण नहीं हो पाता।

(स) **स्वबंध्यता (Self Sterility) –** फलवृक्षों के पुष्पों में पूर्ण जननांगों (नर एवं मादा) के उपस्थित होने के बाद भी दोनो का आपस में निषेचन नही हो पाता और फूल से फल नही बन पाते हैं। अर्थात एक ही प्रकार की जाति में उसी जाति के परागकणों का अक्षम होना तथा अफलन होना।

2. **कायिकीय प्रभाव (Physiological factors) :** कभी–कभी फलवृक्षों में अन्य कारकों के अलावा कायिकीय क्रियाएँ जैसे नाइट्रोजन की अधिक मात्रा, कार्बोहाइड्रेट का स्तर, पादप हार्मोन का प्रभाव, मात्रा एवं संतुलन आदि ऐसे कारक हैं जो पौधों की वृद्वि, फूल लगने एवं फल बनने को प्रभावित करते हैं। नाइट्रोजन की अधिकता से वानस्पतिक वृद्धि का अधिक होना तथा कार्बोहाइड्रेट का कम होना अफलत को बढ़ाता है। रासायनिक पदार्थ (हार्मोन) आदि की मात्रा एवं संतुलन अनेक क्रियाओं में बाधा बनती हैं। इससे फूलों का कम बनना, फल नहीं लगना एवं फूल तथा फलों का समय से पूर्व झड़ना आदि समस्या रहती हैं। इससे फलवृक्षों पर फल नही बनते या बहुत कम अथवा पकने तक नही रूकते हैं और फलोद्यान अफलत की स्थिति में आकर अनुत्पादक हो जाता है।

3. **फलवृक्षों की विकासीय प्रवृति (Evolutionary tendencies) -** इसमें फलवृक्षों पर फूल खिलने के बाद परागण की क्रिया से लेकर फल बनने तक विभिन्न स्थितियाँ होती हैं जिसमें फूलों की संरचना, परागणकण का उर्वर होना, जननांगों का सही अवस्था में होना आदि शामिल हैं। इनमें से एक भी स्थिति विकार युक्त होने पर अफलन होता है।

(अ) **अपूर्ण फूलों का बनना (Formation of degenerated flowers) :** कुछ फल वृक्षों पर पूर्ण फूलों का निर्माण नही होता। जब एक ही पौधों पर मादा एवं नर फूल अलग–अलग स्थान पर उत्पन्न होते हैं ऐसी स्थिति उभयलिंगाश्रयी

(मोनोसियस) होती है जैसे कटहल। परन्तु जब नर एवं मादा फूल अलग–अलग पौधो पर उत्पन्न हो तो वह एकलिगांश्रयी (डायोसिस) कहते हैं जैसे खजूर, पपीता। ऐसे में नर फूलों या पौधो की पर्याप्त संख्या में नही होने से परागण की क्रिया पूर्ण नही हो पाती और अफलत की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

(ब) जननांगों के परिपक्वता में भिन्नता (Dichogamy) : फलवृक्षों पर फूल खिलने के बाद उपस्थित जननांगों में परिपक्वता का समय अलग–अलग होता है। जैसे नर अंगो के पहले परिपक्व होने को ''प्रोटोएण्ड्री'' (सीताफल में) तथा मादा अंगो के पहले परिपक्व होने को ''प्रोटोगायनी'' (चीकू में) कहते है। ऐसी स्थिति में स्वयंसेचन के नहीं होने के कारण अफलन की स्थिति होती है।

(स) पराग का उर्वर न होना (Impotent pollen): फलवृक्षों में कभी–कभी फूल तो पूर्ण होते हैं परन्तु उनमें उपस्थित परागकण जीवनक्षम नही होते, जिससे परागण में सेंचन की क्रिया पूर्ण नही होती है और अफलत होती है, जैसे अंगूर में कुछ किस्में।

(द) विषमवर्तिकात्व (Heterostyly) : कुछ फलवृक्षों में फूल की बनावट ही विकार युक्त होती है जिसमें वर्तिका (स्टाईल), पुंकेसर तन्तु (फिलामेन्ट) से लम्बी अथवा विपरीत होती है, इससे पुष्प के स्वयं निषेचन में बाधा आती है, और फल का निर्माण नही होता है।

अफलन की समस्या का उपाय (Control measures of unfruitfulness) – निम्न उद्यानिकी क्रियाओं के द्वारा फलोद्यान की अफलन की समस्या में कमी लायी जा सकती है।

1. **पराग वाले फलवृक्ष लगाना (Pollinizers) :** जिन फलवृक्षों में पराग सेचन वाले वृक्ष कम होते है वहां पराग देने वाले वृक्षों को स्थान स्थान पर लगाना चाहिए। इनको पोलीनाइजर्स कहते है। इससे परागकण पर्याप्त मात्रा में मिलते है, और फलन भी अच्छा होता है। जैसे सेव, बेर, आम की कुछ जातियाँ एवं पपीते में नर पौधे लगाना।
2. **जड़ो की काट–छाँट (Root prunning) :** इसमें फूल आने के एक माह पूर्व फल वृक्षों के फैलाव में चारो तरफ 50–60 सेमी0 गहरी खाई खोद देते हैं। खाई पार की जडे काटकर खाद मिट्टी के मिश्रण से भर, सिंचाई करते हैं इससे कार्बोहाइड्रेट की मात्रा के बढ़ने से फसल अच्छी होती है।
3. **वलय बनाना (Ringing) :** इस क्रिया में फलवृक्षों की चयनित शाखाओं पर चारो ओर 5 सेमी. चौड़ी छाल उतार कर वलय बना देते हैं। वलय अधिक गहरी नही हो एवं लकड़ी (जाइलम) को नुकसान नही करें ऐसा करने से शाखाओं में कार्बोहाइड्रेट का स्तर बढ़कर फलत को बढ़ावा मिलता है।
4. **फलोद्यान का प्रबन्धन (Orchard management) :** फलोद्यान का अच्छा एवं वैज्ञानिक प्रबन्धन अफलत की समस्या को कम करता है। इसमें समय पर निराई–गुड़ाई, पोषण, काट–छाँट, रोग–कीटो से बचाव, पौधो को खुला बनाना आदि उद्यानिक क्रियाएँ समय पर करते रहना चाहिए। इससे उद्यान से अच्छी उपज मिलती है।
5. **उद्यान में परागण क्रिया (Pollination) :** फलवृक्षों में फूल आने के बाद परागण की क्रिया समय पर एवं अधिक हो इसके लिए पराग ले जाने वाले कीटों का विशेष प्रबन्ध करना चाहिए। जैसे बाग में भौरे, तितली, मधुमक्खी आदि को आकर्षित करना, इससे निषेचन की क्रिया समय पर सम्पन्न होने से अफलत दूर होती है।
6. **पादप हार्मोन का प्रयोग (Use of plant growth regulators) :** आम, नीबू आदि फलवृक्षों में हार्मोन के असंतुलन के कारण फूल एवं फल समय से पहले गिर जाते हैं। इसके लिए 2,4–D, NAA आदि वृद्धि नियामकों का छिड़काव करना चाहिए। जैसे नीबू में 2,4–D, 10 पीपीएम. का छिड़काव मई एवं सितम्बर माह में करने से फलवृक्षों से फूल एवं फल का झड़ना रूक जाता है और फलत अच्छी होती है।

9.4 फलोद्यान में विभिन्न पादप वृद्धि नियन्त्रकों का प्रयोग (Use of plant growth regulators in orchard)

पादप वृद्धि नियन्त्रक पोषक तत्व के अतिरिक्त वह कार्बनिक पदार्थ है, जिसकी सूक्ष्म मात्रा ही पौधों की कार्यिकीय क्रियाओं को नियंत्रित करती है। ऐसे पदार्थ पादप हार्मोन्स या पादप नियंत्रक या वृद्धि नियंत्रक या पादप वृद्धि पदार्थ कहलाते हैं। पादप नियंत्रको का निर्माण पौधों में विभिन्न स्थानों पर होता है तथा वे एक स्थान से दूसरे स्थान पर गति कर पौधों की विभिन्न क्रियाओं में भाग लेते हैं। पादपों के अतिरिक्त इनका निर्माण कृत्रिम रूप से भी किया जा कर प्रयोग में लिया जाता है।

पादप वृद्धि नियंत्रकों को निम्न पाँच भागों में विभाजित किया गया है –

1.ऑक्सिन	(Auxin)
2.जिब्रेलिन्स	(Gibberellins)
3.साइटोकिनिन्स	(Cytokinins)
4.वृद्धि रोधक	(Inhibitors)

5.इथाइलीन (Ethyline)

1. **ऑक्सिन (Auxin) :** ऑक्सिन पौधों में पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है। प्राकृतिक ऑक्सिन नयी पत्तियों एवं ऊपरी कलियों में बनते है, तथा बाद में विभिन्न स्थानों पर क्रियाओं में भाग लेते है। इनका प्रयोग पौधो मे कोशिका विभाजन, जड़ो का निर्माण, फूलों एवं फलों को गिरने से रोकना, फलों को बीज रहित बनाना, खरपतवार नियंत्रण आदि में होता है। उदाहरण – इण्डोल एसिटिक अम्ल (IAA), नेप्थेलीन एसिटिक अम्ल (NAA), इण्डोल ब्यूटाइटिक अम्ल (IBA) 2,4–डाईक्लोरोफिनाक्सी एसिटिक अम्ल (2, 4-D) आदि।

2. **जिब्रेलिन्स (Gibberellins) :** यह पौधों में निर्मित रासायनिक पदार्थ हैं, जो पौधों में कोशिका विभाजन के साथ–साथ उनका लम्बवत आकार बढाने में सहायक होता है। यह फलों का आकार बढ़ाने, फलों को बीजरहित बनाने, बीज व कलिकाओं की सुषुप्तावस्था हटाने में सहायक है। जिब्रेलिक अम्ल (GA) एक ऐसा कृत्रिम रसायन है जो जिब्रेलिन के समान ही कार्य करता है।

3. **साइटोकाइनिन्स (Cytokinins) :** यह पौधों में कोशिका विभाजन में सहायक रसायन है। बीज एवं कलिकाओं की सुषुप्ता हटाने, जड़ों, प्ररोहों तथा रेशे के निर्माण में सहायक है। काइनेटिन, जिएटिन, 6–बेन्जाइल एडिनिन आदि ऐसे प्राकृतिक एवं कृत्रिम रसायन हैं।

4. **वृद्धि रोधक (Inhibitors) :** यह वृद्धि रोधक रसायन है। जो पौधों में बीज व कलिकाओं की वृद्धि रोकना, बीज में अंकुरण रोकना, जैसी वृद्धि वाली क्रियाओं में अवरोध पैदा करता है। यह पौधों में बौनापन भी उत्पन्न करता है, जैसे मैलिक हाइड्रेजाइड (MH) ऐसा रसायन है जो प्याज के भण्डारण में अंकुरण को रोकता है।

5. **इथाइलीन (Ethylene) :** इसको फल पकाने वाले रसायन के रूप में जाना जाता है। यह गैस के रूप में कार्य करती है। तथा बहुत कम सान्द्रता में अधिक सक्रिय होता है। यह बेर, खजूर, चीकू, केला, सिट्रस आदि फलों को पकाने में सहायक है। यह फलों को पकाने के साथ पौधों की अन्य क्रियाओं में भी उपयोगी है। कृत्रिम रसायन के रूप में ईथरॉल, व्यापारिक उत्पाद ऐथ्रेल का उपयोग किया जाता है।

पादप वृद्धि नियंत्रकों का उद्यानिकी में उपयोग (Use of plant growth regulators in horticulture)

फलोद्यान में पादप वृद्धि नियंत्रको का प्रयोग विभिन्न कार्यों में किया जाता है –

1. **वानस्पतिक प्रवर्धन पर प्रभाव (Effect on vegetative propogation) :** फलवृक्षों में वानस्पतिक प्रवर्धन की विधियों में, जैसे– कलम तथा दाब कलम में जड़ों को शीघ्र तथा सुगमता पूर्वक विकसित करने में हार्मोन का प्रयोग किया जाता है। अनार, अंगूर आदि की कलमों को आईबी.ए.(100–500 पी पीएम) से उपचारित करने से जड़े शीघ्र निकलती हैं। इसके अलावा मूलवृन्त एवं सायन का मिलन कराने में भी हार्मोन्स का उपयोग किया जाता है। नींबू प्रजाति में गूटी में आई.ए.ए. तथा एन.ए.ए. 100 पीपीएम का प्रयोग किया जाता है।

2. **फूलों के नियंत्रण के लिए जिब्रेलिन्स (Initiation of flowering) :** फलवृक्षों में फूलो को शीघ्र लाने, विलम्ब से या फिर अधिक फूलो को कम करने जैसी क्रियाओं में हार्मोन्स का उपयोग किया जाता है। आम, अमरूद में एन. ए.ए.(200–500 पीपीएम) का प्रयोग किया जाता है। इसके अलावा अमरूद एवं अनार में फूलों को कम करने (विरलीकरण) के लिए 200 पीपीएम एन.ए.ए. का उपयोग किया जाता है।

3. **फलों एवं फूलों को झड़ने से रोकने में (Effect on preharvest fruit drop) :** फलवृक्षों में फूल झड़ने एव फलों के पकने से पूर्व झड़ने से रोकने के लिए वृद्धि नियंत्रक का प्रयोग सफलतापूर्वक किया जाता है। आम नींबू, नारंगी, में एन.ए.ए, 2, 4,–D तथा जिब्रेलिक अम्ल का 15–20 पीपीएम के घोल का छिड़काव किया जाता है।

4. **फलों को पकाने में (Effect on fruit ripening) :** बाजार की मांग के अनुसार फलों को जल्दी पकाने या देर से पकाने में भी हार्मोन्स का प्रयोग किया जाता है। आम, केला, चीकू, खजूर, आदि में फलों को हार्मोन्स से पकाया जाता है। इसके लिए एथ्रेल (500–1000पीपीएम) का प्रयोग किया जाता है। परन्तु इसका प्रयोग नियंत्रित मात्रा में तथा सावधानी से करना चाहिए।

5. **फल बनाने व आकार बढ़ाने पर प्रभाव (Effect on fruit setting) :** अनेक फलवृक्षों में फल लगने पर हार्मोन्स का प्रयोग कर अधिक फूलों से फल बनाये जाते हैं। जैसे आम में एन.ए.ए 10 पीपीएम के उपयोग से अधिक फल लगते हैं। नींबू व अंगूर में फलों के आकार में वृद्धि करने के लिए जिब्रेलिक अम्ल (25से 50पीपीएम) तथा एन.ए.ए का प्रयोग किया जाता है।

6. **फलों को बीज रहित बनाने में (Seedless fruits) :** कुछ फलों में गुणवत्ता सुधार के लिए बीजरहित फल तैयार करने में भी हार्मोन्स का उपयोग किया जाता है। ऐसे फल बिना निषेचन तथा परागण के तैयार होते हैं, जिससे फल बीज रहित बनता है। इसके लिए आईएए, आईबीए, आईपीए, एनएए का प्रयोग किया जाता है।

7. **खरपतवार नियंत्रण में उपयोग (Effect on weeds) :** फलोद्यान मे खरपतवार एक प्रमुख समस्या होती है। इसको निराई–गुड़ाई करने से समय, श्रम व अधिक धन खर्च होता है। परन्तु हार्मोन्स का छिड़काव कर इन पर नियंत्रण किया जा सकता है। इसके लिए 2,4–डी की 0.1 प्रतिशत की मात्रा का उपयोग चौडी पत्ती वाले खरपतवार के लिए किया जाता है।

उपर्युक्त के अतिरिक्त हार्मोन्स का उपयोग कलिकाओं की प्रसुप्ति समाप्त करने, बीजों को उपचारित कर अंकुरण बढ़ाने, पादप प्रजनन, भण्डारण की अवधि बढ़ाने, एकान्तरित फलन को रोकने जैसे अनेक कार्यों में सफलता पूर्वक किया जा रहा है।

पादप नियंत्रको को प्रयोग करने की विधियाँ (Methods of Application) : फलोद्यान में विभिन्न कार्यों में पादप हार्मोन्स अथवा पादप वृद्धि नियंत्रकों का प्रयोग किया जाता है। इन नियंत्रकों की यह मात्रा बहुत सूक्ष्म होती है। जिसकी सान्द्रता पीपीएम (अर्थात एक भाग रसायन प्रति दस लाख भाग पानी) में व्यक्त की जाती है। इसलिए इतनी सूक्ष्म मात्रा की सान्द्रता वाला घोल बनाने या प्रयोग करने में अधिक सावधानी की आवश्यकता होती है। जब एक मिली या मिलीग्राम पादप नियंत्रक रसायन को एक लीटर पानी में घोला जाता है, तब एक पीपीएम की सान्द्रता का घोल तैयार होता है। ये पादप वृद्धि नियंत्रक विभिन्न रासायनिक प्रकृति के होने के कारण सीधे पानी में नहीं घुलते हैं। अतः इनका घोल बनाने के लिए पहले इनको एल्कोहल या अमोनियम हाइड्रॉक्साइड या अमोनिया विलयन की अल्प मात्रा में घोल कर परिशुद्ध पानी में मिलाते हैं।

पादप नियंत्रकों की प्रयोग विधियाँ निम्न हैं –

1. **घोल के रूप में (Liquid form)** – सान्द्रता के अनुसार यह दो प्रकार से प्रयोग किया जाता है।
   - **(अ) अधिक समय के लिए डुबोना–** इसमें कम सान्द्रता (25–50 पीपीएम) के घोल में कलमों के निचले सिरो को 24 घण्टो के लिए डुबाकर प्रयोग लिया जाता है।
   - **(ब) कम समय के लिए डुबोना** – इसमें अधिक सान्द्रता (500–2000 पीपीएम) के घोल में कलमों के निचले सिरे को कम समय (सेकण्ड से मिनट तक) के लिए डुबोकर प्रयोग लिया जाता है।
2. **छिड़काव के रूप में (Spray method)** – फलवृक्षों पर विभिन्न उपयोगों के लिए वांछित सान्द्रता का घोल बनाकर छिड़काव किया जाता है।
3. **पाउडर के रूप में (Powder form)** – इसमें कलमों के निचले सिरे को गीला कर पाउडर में मिश्रित रसायन से उपचारित किया जाता है। इसके लिये सेरेडेक्स रूटेक्स आदि रसायन तैयार स्थिति में उपलब्ध होते है।
4. **पेस्ट के रूप में (Paste form)** – इस विधि में रसायन के चूर्ण को लिनोलिन या अन्य जेल में मिलाकर प्रयोग लिया जाता है।
5. **वाष्प के रूप में (Vapour form)** – ग्रीन हाऊस जैसे बन्द स्थान में रसायन को किसी गर्म प्लेट पर डालकर वाष्प के रूप में उपचारित करते हैं।
6. **ऐरोसोल के रूप में (Aerosol form)** – रसायन को बारीक छिद्र वाले नोजल लगे पम्प में भरकर दबाव से छिड़काव करते है। इसमें रसायन वाष्प के रूप में निकल कर कार्य करता है।
7. **इंजेक्शन के रूप में (Injecton form)** – रसायन के घोल को इंजेक्शन में भरकर फलवृक्षों के विशेष भाग पर प्रयोग करते हैं।

अभ्यास प्रश्न

बहुचयनात्मक –

1. शुष्क एवं गर्म जलवायु के लिए उपयुक्त फल है–
   (अ) बेर (ब) आम
   (स) अंगूर (द) सेव
2. फलवृक्षों के लिए भूमि की गहराई होनी चाहिए–
   (अ) 4.5 मी. (ब) 3 मी.
   (स) 2 मी. (द) 1 मी.
3. पंचभुजाकार विधि में पूरक पौधों के लिए उपयुक्त है–
   (अ) आम (ब) पपीता
   (स) खजूर (द) नींबू
4. पपीता का पौध रोपण का अन्तर है–
   (अ) 6×6 मी. (ब) 5×5 मी.
   (स) 3×3 मी. (द) 7×7 मी.
5. बाग लगाने के लिए सिंचाई की उपयुक्त विधि है–
   (अ) प्रवाह विधि (ब) ड्रिप पद्धति
   (स) नालियाँ बनाकर (द) वलय विधि
6. पाले से बचाव के लिए गंधक के घोल की सान्द्रता होती है।
   (अ) 1% (ब) 3%
   (स) 1.5% (द) 0.1%
7. ठण्डी हवाओं से बचाव के लिए वायुरोधी वृक्ष लगाते हैं।
   (अ) पूर्व में (ब) पश्चिम में
   (स) उत्तर में (द) दक्षिण में
8. ''लू'' कहलाती है –
   (अ) अत्यधिक गर्म हवा (ब) सामान्य हवा
   (स) ठण्डी हवा (द) गर्म हवाएं

9. फलवृक्षो के तनो पर सफेद चूना से बचाव होता है–
(अ) ठण्ड से (ब) लू से
(स) वर्षा से (द) रोगो से

10. पलवार (मल्चिंग) से बचाव होता है–
(अ) रोग का (ब) कीट का
(स) नमी का (द) कोई नही

11. नीबू में फलो को गिरने से रोकता है।
(अ) 2,4–D (ब) आई.ए.ए.
(स) आई.बी.ए. (द) सेरेडेक्स

12. निम्न में से फलत के लिये उपयुक्त है–
(अ) फॉस्फोरस (ब) नाइट्रोजन
(स) प्रोटीन (द) कार्बोहाइड्रेट

13. प्रोटोगायनी सम्बन्धित है –
(अ) पुष्प (ब) जड़
(स) तना (द) पत्ती

14. निम्न में से काट–छाँट अति आवश्यक है –
(अ) पपीता (ब) आम
(स) अमरूद (द) बेर

15. पोलीनाइजर्स है –
(अ) कीट (ब) फल वृक्ष
(स) रोग (द) वायुरोधी

16. वृद्धि निरोधक पादप नियन्त्रक है –
(अ) 1AA (ब) NAA
(स) ABA (द) 1BA

17. 2, 4– डी है –
(अ) वृद्धि कारक (ब) रोग नाशक
(स) कीट नाशक (द) कवक नाशक

18 भण्डारण में प्याज को उपचारित करते हैं –
(अ) MH (ब) 1BA
(स) 2,4-D (द) GA_3

19. जड़ उत्पत्ति वाला हार्मोन है –
(अ) GA_3 (ब) 1AA
(स) 1BA (द) काइनेटीन

20. फूल आने के लिए एनएए की सान्द्रता है –
(अ) 20 पीपीएम (ब) 30 पीपीएम
(स) 40 पीपीएम (द) 50 पीपीएम

अतिलघूत्तरात्मक–

21. फलोद्यान के लिए स्थान का चुनाव के महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं के नाम लिखिए।
22. वायुरोधी वृक्षों की सूची बनाइये।
23. प्रतिकूल मौसम से क्या तात्पर्य है?
24. पाला या तुषार की परिभाषा लिखिए।
25. ''स्वबंध्यता'' का उदाहरण वाले फलवृक्ष का नाम लिखिए।
26. अफलन के दो बाहय प्रमुख कारकों के नाम लिखिए।
27. पौधों में वृद्धि एवं फलन के लिए एक कारक का नाम लिखिए।
28. आईबीए रसायन का मुख्य उपयोग लिखिए।

लघूत्तरात्मक

29. उद्यान मे बाग लगाने की विभिन्न विधियों का सचित्र वर्णन कीजिए।
30. लू से फलवृक्षों पर क्या प्रभाव होता है?
31. पाले से बचाव के कोई तीन उपाय बताइये?
32. अफलन में काट–छाँट का महत्त्व लिखिए।
33. अफलत को दूर करने में पादप हार्मोन का प्रयोग लिखिए।
34. प्रवर्धन में पादप नियंत्रकों का उपयोग लिखिए।
35. पादप वृद्धि नियन्त्रकों का वर्गीकरण कीजिए।

निबन्धात्मक

36. प्रतिकूल मौसम फलोद्यान को कैसे नुकसान करता है?इससे बचाव के उपायों का उल्लेख कीजिए।
37. अफलन एवं अनुत्पादकता में अन्तर करिए ?अफलन के बाह्य कारकों का वर्णन करते हुए, उपायों को सूचीबद्ध कीजिए।
38. पादप वृद्धि नियंत्रक की परिभाषा लिखिए। उद्यानिकी में अधिक उपज के लिये इसकी भूमिका का वर्णन कीजिए।

उत्तरमाला

(1) अ	(2) स	(3) ब	(4) स	(5) ब
(6) द	(7) स	(8) अ	(9) ब	(10) स
(11) अ	(12) द	(13) अ	(14) द	(15) ब
(16) स	(17) द	(18) अ	(19) स	(20) अ